ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 5, May 2016

समकालीन कविता : मनुष्य और प्रकृति का रागात्मक सम्बन्ध

डॉ. मंजूषा मिश्रा

एसोशिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, का. सु. साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अयोध्या

सारांश

त्रिलोचन ने अपने काव्य में अपने स्थानीय जनजीवन और उसके परिवेश को अनेक रूपों में व्यक्त किया है। क्या आपने कभी नीम पर खिले हुए फूल देखे हैं। उनका रंग कैसा होता है। त्रिलोचन ये बातें जानते थे। वे पेड़–पौधों को निकट से देखते थे। उन्होंने फूले हुए नीम का वास्तविक वर्णन इस प्रकार किया है– ''नीम में नव फूल आए/ सुरभिमय वातास/ मधुर मंजरियां तरंगित/ कर रहीं मधु मौन इंगित/ भर रहा ऋतुराज में प्रति श्वास में विश्वास/ सुरभिमय वातास।'' यह सुरभिमय वातास बाहर निकलकर ही सूंघी जा सकती है। खुले मैदान में अथवा किस बाग में अथवा जंगल में। विशेष रूप से गांव के परिवेश में। महानगर के लोग ऐसी वातास से प्रायः वंचित रहते हैं। लेकिन आजकल मानवीय स्वार्थ पेड़ काट रहा है। कवि अलीक ने गांव की पुरानी लीक पर चलते हुए यह अभिलाषा व्यक्त की है कि नीम का पेड़ न काटा जाए। हरा–भरा पेड़ काटना पाप माना गया है। इसीलिए इस कविता में चिड़िया दगड़ प्यारे से कहती है–'' क्यूं/ काटा/ नीम का पेड़/ मेरा जीवन क्यों बांटा/ जिस पर मेरा बसेरा था/ दिवस पल फेरा था/ क्यों काटा नीम का पेड़ ?'' (कबीर राग, पृष्ठ–103) पेड़ों के कटने पर नगरों में दूर–दूर तक छाया नहीं दिखाई पड़ेगी। ऐसी हालत में गांव का युवक महानगर में सोचेगा– ''धूप में/ जब भी जलें हैं पांव/ घर की याद आई।'' तो, घर की याद उसे ही आती है, जिसे अपने घर से हार्दिक लगाव होता है। वरिष्ठ कवि विजेन्द्र ने अपनी जन्म–भूमि ग्राम धरमपुर (तहसील सहसवान, जिला–बदायूं, उत्तर प्रदेश) को अपनी कविताओं में बार–बार याद किया है। इसका प्रमाण है उनकी याद शीर्षक कविता, जो स्मृत रूप–विधान के आधार पर रची गई है। रतलाम की सुबह शीर्षक लम्बी कविता में वह धरमपुर को याद करते हुए कहते हैं– ''गांव में कहा करते/ आम होता है वहां/ दुमट धरती जहां/ पानी रहे मीठा/ याद आता/ अपना गांव धरमपुर मुझको/ थोड़े नीचे/ जहां पानी था निरा मीठा/ बाग ही बाग थे भरे आमों के।'' लेकिन मरूभूमि में पहुंचकर वह सोचते हैं– ''नहीं देखे आम के वृक्ष हरियाते/ न उनका महकता बौर।'' अपनी जन्म–भूमि के प्रति ऐसा हार्दिक लगाव कम कवियों में लक्षित होता है। कहावत है प्रीत घटै परदेस बसे। लेकिन विजेन्द्र की कविता ने ये कहावत झुठला दी है।

परिचय

वस्तुतः काव्य सर्जना के लिए यह जरूरी है कि कवि बाहरी जगत् को अपनी ज्ञानेन्द्रियों से निरन्तर देखता–परखता रहे। रूप–रस–गन्ध–स्पर्श–ध्वनि का ज्ञान इन्द्रियों के ही माध्यम से होता है। जिन कवियों का इन्द्रिय–बोध जितना व्यापक होता है, उनके काव्य की अन्तर्वस्तु भी उतनी ही विस्तृत होती है। इस सन्दर्भ में संस्कृत के आदि कवि वाल्मीकि का नाम अग्रगण्य है। उनके बाद कालिदास का नाम कनिष्ठका पर आता है। कालिदास का मेघदूत उनके व्यापक इन्द्रिय–बोध का रागात्मक स्वरूप है। किस कवि को कौन से फूल पसन्द है। यह बात उसकी कविताएं पढ़कर समझी जा सकती है। हिन्दी के युवा कवि नीलकमल ने प्राकृतिक पर्यवेक्षण और निरीक्षण के आधार पर 'ककून' लम्बी कविता की रचना की है।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 5, May 2016

इस कविता में कवि ने अपने अनुभव के आधार पर यह विचार व्यक्त किया है कि रेशम के कीड़े अपनी क्रियाशीलता से दूसरों के लिए रेशम के धागे रचते हैं। और अपने जीवन का बलिदान कर देते हैं। कवि का यह विचार कविता की वास्तविकता बन गया है। यह कविता हमारे व्यापक समाज से जुड़कर निर्मम वास्तविकता का उद्घाटन करती है। इस सन्दर्भ में कवि आक्रोश-भरी भाषा में कहता है- "मुट्ठी-भर प्रभुओं के तन पर रेशम का मतलब/ करोड़ों नागरिक ककूनों की असमय मृत्यु/ स्कूलों में मारे जाते शिशु ककून/ कालेजों में मारे जाते युवा ककून/ घरों में दम तोड़ती स्त्री ककून/ दफ्तरों कारखानों में मृत्यु का वरण करते/ मजदूर ककून।" (यह पेड़ों के कपड़े बदलने का समय है) नीलकमल ने रेशम के कीड़े ककून को अनेक सामाजिक सन्दर्भों से जोड़कर उसे अभिनव अर्थवत्ता प्रदान की है। साथ-ही-साथ क्रूर व्यवस्था की आलोचना भी की है। इस कविता के मूल में है कवि का जागरूक इन्द्रियबोध, जिसके आधार पर कविता का विस्तार किया गया है। वस्तुतः बाहरी दुनिया को देखने-परखने के बाद ही संवेदनशील कवि और अधिक संवेदशील होता है। आचार्य शुक्ल कहा करते थे कि शब्द-काव्य रचने से पहले वस्तु जगत् के काव्य का अनुशीलन अनिवार्य है। उनकी मान्यता है कि कविता करूणा और प्रेम के भावों की अभिव्यक्ति से समाज में लोकमंगल की स्थापना करती है। करूणा की प्रवृत्ति रक्षण की ओर होती है और प्रेम की रंजन की ओर। जीवन की विषमता देखते हुए रक्षण पहले है। रंजन बाद में।

वयोवृद्ध कवि छविनाथ मिश्र ने लोक मांगलिक भावना की अभिव्यक्ति धूप और मां के रागात्मक सम्बन्ध से इस प्रकार की है- "धूप किसी भी ऋतु की हो/ नरम-गरम सुषम / जैसी भी होती है/ वह मां जैसी होती है/ दूब के पातों पर पसरी/ सुनहली हरीतिमा जैसी होती है/ खेत में हो या सीवान में हो/ वह न किसी धर्म की होती है/ न किसी मजहब की होती है/ वह हम सब की होती है/ नरम-गरम सुषम/ जैसी भी होती है/ मां जैसी होती है।" (3,4) इस कविता में कवि ने अपने इन्द्रियबोध के आधार पर विचारबोध और सौन्दर्यबोध की ऐसी आकर्षक अभिव्यक्ति की है कि पाठक का मन स्वार्थ-संकुचित घेरे से बाहर निकल आता है। उसका मन धूप के समान ही संवेदनशील हो जाता है।

विचार – विमर्श

आज की युवा कविता के लिए मैं की आवश्यकता नहीं है। हम की आवश्यकता है। व्याकरण के अनुसार हम इसलिए उत्तम पुरूष है कि वह अपने साथ सबको लेकर चलता है। महाकवि निराला का मैं हम में बदलता रहता है। इसी

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 5, May 2016

प्रकार विजेन्द्र का मैं भी हम का समानार्थी हो जाता है। हिमाचल प्रदेश के युवा कवि सुरेश सेन निशान्त अपनी कविताओं में मैं के साथ-साथ हम का भी प्रयोग करते हैं। इस दृष्टि से उनकी जामुन और बर्फ कविताएं पठनीय हैं। पहली कविता जामुन में कवि ने इस बात पर शोक व्यक्त किया है कि बहुत पुराना था वह पेड़ जामुन का। छायादार भी था। लेकिन उसे कटवाकर वहां मन्दिर बनवा दिया गया। इससे कवि को हार्दिक वेदना महसूस होती है। वह सोचता है- ''खाली हाथ जब लौटूंगा मां को क्या जबाव दूंगा/ हाट में कहीं बिक भी नहीं रहे/ कोई दूसरा पेड़ भी नहीं बोया हमने/ इस अरसे में।'' कवि की वेदना यह है कि जामुन का पेड़ कट गया है। अब उसके मीठे फल कभी नहीं प्राप्त होंगे। हमारी धार्मिक अंधता कितनी क्रूर हो गई है प्रकृति के प्रति। ऐसा ही विचार विजेन्द्र ने भी अपनी कविताओं में व्यक्त किया है। यदि सुरेश सेन निशान्त को जामुन का पेड़ कटने से दर्द का अहसास होता है तो विजेन्द्र को आम के बाग कटने और उजड़ने से पीड़ा महसूस होती है। इस प्रकार युवा पीढ़ी वरिष्ठ पीढ़ी से भावात्मक नाता जोड़ रही हैं। यह नाता बता रहा है कि पर्यावरण का विनाश जीवन के लिए खतरे की घंटी है। कितने ऐसे युवा कवि हैं जो, प्रकृति के प्रति संवेदनशील हैं। यह शोध का विषय है। सुरेश सेन निशान्त पर्यावरण विनाश के प्रति इतने चिन्तित हैं कि पहाड़ पर बर्फ न गिरने पर उन्हें आसमान से बरस रही भीषण गर्मी से परेशान होना पड़ता है। पर्यावरण-विनाश ने पहाड़ी जनों को विस्थापित कर दिया है। वे रोजी-रोटी के लिए पहाड़ से पलायन कर रहे हैं। कवि निशान्त की चिन्ता ऐसे लड़के-लड़कियों के प्रति गहरी है, जो बसों में बैठकर दूर शहरों की ओर चले गए, लौटकर वापस नहीं आए पहाड़ों पर। उत्तराखण्ड निवासी हरीशचन्द्र पाण्डेय इलाहबादी कवि के रूप में विख्यात हैं। उनकी एक कविता है 'बर्फ गिर रही है।' यह दृश्य देखकर वह कहते हैं- ''कोलाहलो, अपने-अपने पांव समेट लो/ शरीसृपों, भूमिगत हो जाओ/ बर्फ गिर रही है।'' लेकिन अब ''बर्फ पिघल रही है/ कैमरे स्वर्ग में उतरने के साक्ष्य जुटा रहे हैं/ बर्फ को जी भर जीकर सैलानी आ रहे हैं/ उनके हाथों में ताजा अखबार हैं/ अखबारों में लोग ठंड से मर रहे हैं।'' इस कविता में भी कवि का इन्द्रियबोध सजग हैं। उसने परस्पर विरोधी भावों का निरूपण करके ठंड से मरनेवाले लोगों के प्रति शोक संवेदना व्यक्त की है। ऐसी कविताएं पढ़कर और समझकर निदा फाज़ली का शेर याद आ रहा है- ''घर से मस्जिद है बहुत दूर चलो यूं कर लें/ किसी रोते हुए बच्चे को हंसाया जाए।'' महेश चन्द्र पुनेठा भी पहाड़ी परिवेश के कवि है। वह अपने आस-पास की प्रकृति को निकट से देखते-परखते हैं। और फिर स्थानीय पेड़ खिनुवा के बारे में कहते हैं- ''खिनुवा का पेड़ हूं मैं/ तुम कहां पहचानोगे मुझे/ मैं नहीं दे सकता तुम्हें/ सरस स्वादिष्ट फल/ नहीं बन सकता हूं तुम्हारी हवेली की/ दरवाजे-खिड़कियों की चौखट/ मेरे पास नहीं हैं/ चित्ताकर्षक और सुगन्धित फूल/ जिन्हें सजा सको/ तुम अपने फूलदानों में।'' (शुक्रवार, साहित्य वार्षिकी, 2013, पृष्ठ-183) महेश चन्द्र पुनेठा का तुच्छ और उपेक्षणीय खिनुवा का पेड वरिष्ठ कवि विजेन्द्र के महत्त्वहीन लेकिन महत्त्वपूर्ण कुकुरभाँगरा से जुड़कर अपनी उपयोगिता की घोषणा कर रहा है। इस प्रकार प्रकृति-पर्यवेक्षण का सूत्र दोनों कवियों को जोड़ रहा है।

परिणाम

हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था में इतना त्रासद उलट-फेर हो गया है कि हमारा लोक तो अभावग्रस्त और संत्रस्त है, लेकिन तंत्र अपनी मौज में मस्त है। इसीलिए अदम गोंडवी कहते हैं-'' तुम्हारी मेज चांदी की, तुम्हारा जाम सोने का/ यहां जुम्मन के घर में आज भी फूटी रकाबी है।'' (2,3)। यह घनघोर विषमता नई नहीं है। बहुत पुरानी है। याद कीजिए सुदामा की पत्नी का कथन- ''या घर तैं कबहूं न गयौ पिय टूटो तवा औ फूटी कठौती।'' आज के भारत में अमीरों की संख्या तो बहुत कम है, लेकिन गरीब असंख्य हैं। तभी तो दुष्यन्त कुमार ने कहा था- ''कल नुमाइश में मिला था चीथड़े पहने हुए/ मैंने पूछा नाम तो बोला कि हिन्दुस्तान है।'' ऐसे भूखे-नंगे हिन्दुस्तान की दुर्दशा का कारण विदेशी पूंजी है। हमारी सरकार की उदारीकरण और निजीकरण की नीति ने उसके लिए सभी द्वार खोल दिए हैं। मोदी सरकार भी अमरीकी कम्पनियों को आमंत्रित कर रही है। आइए। पधारिए। धन कमाइए। हमारे बेरोजगारों को रोजगार दीजिए। ऐसे कुटिल समय में जनपक्षधर युवा कवि कहता है- ''जन की पीड़ाओं को/ जब शब्द देता है/ कवि/ हाहाकार करता है/

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 5, May 2016

व्यथाओं का समंदर/ उसकी कविता में/ लोकतंत्र के मसीहा/ पुरस्कृत करते हैं कवि को/ बताते हैं/ उसे/ मानवता की पीड़ा का गायक।" (5,6) वास्तविकता यह है कि सरकारी तंत्र चाहता ही नहीं हैं कि कवि और लेखक उसके विरोध में कुछ लिखें, जिसे पढ़कर जनता जागरूक हो। अतएव अनेक सत्तामुखी कवि मधुर भाषा में सत्ता की नख-दन्त-विहीन आलोचना करते हैं। वरिष्ठ कवि केदारनाथ सिंह कुम्भन दास के प्रति कविता में कहते हैं- "फिर भी कविवर जाते-जाते पूछ लूं/ ये कैसी अनबन है/ कविता और सीकरी के बीच/ कि सदियां गुजर गईं/ और दोनों में आज तक पटी भी नहीं।" (सृष्टि पर पहरा) वास्तव में केदारजी यह चाहते हैं कि सत्ता की सीकरी से कविता के सम्बन्ध कटु न होकर मधुर हों। लेकिन ऐसा सम्भव नहीं है। भक्तिकाल के कवि सत्ता की सीकरी से दूर रहे। आधुनिक कवियों में निराला के अलावा केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन, त्रिलोचन, मुक्तिबोध, विजेन्द्र जैसे कवि आज की सत्ता के केन्द्र दिल्ली से हमेशा दूर रहे। वस्तुतः केदारनाथ सिंह नागार्जुन की परम्परा के कवि नहीं हैं। यदि होते तो नागार्जुन के समान राजनेताओं की तीखी आलोचना करते। उनकी कविता में त्रिलोचन काव्य जैसी विविधता भी नहीं है। पुरस्कारों से किसी कवि का बड़प्पन नहीं आंका जा सकता है। यह तल्ख हकीकत है आज का युवा कवि कुछ कविताएं लिखने के बाद पुरस्कार-प्राप्ति के लिए जुगाड़ करने लगता है। यह दूषित प्रवृत्ति कविता को हानि पहुंचा रही है। वयोवृद्ध कवि मलय जानते हैं कि समाज में जो कुछ घटित हो रहा है, अच्छा या बुरा। उसे संवेदनशील कवि देख सकता है और समझ सकता है। उनका कहना है- "एक और/ उगता दिन दिखता है/ इस सौर मंडल में/ मनुष्य ही है/ जो सूर्य की तरह/ उगता हुआ थरथराता है/ उसका थरथराना जारी है/ कम नहीं हुआ अभी तक/ जिसे सब नहीं/ देख पाते/ कवि देख पाता है/ जब वह अपनी धड़कनों की/ लहरदार ऊँचाई पर आकर/ खड़ा होकर भी/ खड़ा नहीं रहता।" (4,5)

आजकल मानवता और दानवता का द्वन्द्व चल रहा है। छल-छद्म और स्वार्थ हावी हो रहे हैं। अतः मनुष्य का हृदय निर्मल नहीं है। और न हो सकता है। वर्ग-विभक्त समाज में कोई भी कवि अजातशत्रु नहीं होता है। उसकी कविता अपने शत्रु को पहचानती है। शम्भु बादल कहते हैं कि मै सच कहता हूं।" गीता-कुरान हाथ में ले/ काली कामरेड की जमीन पर/ सच कहता हूं/ भारत घायल है/ घाव बहुत गहरे हैं।" (3,4) सवाल यह है कि भारत घायल क्यों है। जबाव है घनघोर आर्थिक विषमता के कारण। उदारीकरण और निजीकरण की वजह से। घायल भारत का मतलब है भारत के बहुसंख्यक किसान और मजदूर, जो आजकल त्रासद जीवन विताने के लिए अभिशप्त हैं। सियाराम शर्मा ने ठीक लिखा है-" बर्बर पूंजी और हिंस्र साम्राज्यवाद के दौर में लोक और प्रेम सर्वाधिक संकटग्रस्त हैं। वर्तमान काल के भयावह संकट के समय अतीत की प्रेरक स्मृति उत्साह का संचार करती है। निर्मल प्रेम ने असाध्य कार्य साधे हैं। अतः निजी और सामाजिक जीवन के व्यवहार में निश्छल प्रेम-व्यवहार अनिवार्य है, जो कभी-कभी दिखाई पड़ता है। रेखा चमोली का कहना है- "प्रेम में/ चट्टानों पर उग आती है घास/ किसी टहनी का/ पेड़ से कटकर/ दूर मिट्टी में फिर से फलना फूलना/ प्रेम ही तो है/ प्रेम में पलटती हैं ऋतुएं।" (1,2) वरिष्ठ कवि विजेन्द्र भी अपने दाम्पत्य प्रेम को तीर्थराज प्रयाग के समान पवित्र मानते हैं। दाम्पत्य प्रेम से भरे प्रेम को तीर्थराज कहना कवि की उदात्त कल्पना है। कविता मनुष्यभाव की रक्षा करती है। आज का युवा कवि स्वयं को व्यापक सन्दर्भों से जोड़कर पर्यावरण के प्रति भी अपनी चिन्ता व्यक्त करता है और साथ ही साथ शोषित मानव के प्रति भी। युवा कवि रजत कृष्ण को जितनी चिन्ता पेड़, पवन, पानी और आग के प्रति है उतनी ही फिक्र अम्बानी के सपनों में पल रहे इस देश के प्रति भी है।- "यहां/ कुछ चीजें हैं कि/ कभी नहीं बदलीं/ कभी नहीं सुधरीं/ जैसे कि/ फगनू राम गोंड की/ हड़ियल काया में लटक रही/ यह कमीज/ जो फटी है/ वो अब तक/ सिली-तुनी ही न जा सकी/ फगनू राम की/ कमीज का फटापन/ और राम प्रकाश की चप्पल की घिसटन/ हर सरकार को/ दिखती है/ इन्हें बदलने और/ सुधारने की बाते भी/ हर सरकार करती है/ पर किसी भी सरकार के लिए/ कहे हुए को/ पूरा करना/ अब कोई जरूरी तो नहीं रहा/ और टाटा-बिड़ला से/ होते-हुआते/ अम्बानी के सपनों में/ पल रहे इस देश में/ फगनू राम गोंड/ और राम प्रकाश सिंह/ सरकार को/ एक वोट के सिवा/ आखिर देते ही क्या हैं।" इस कवितांश में प्रश्नात्मक शैली के द्वारा कवि ने आजादी से

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 5, May 2016

आज तक के भारतीय लोकतंत्र की असलियत उजागर कर दी है कि अभी तक हमारे समाज में एक भी बुनियादी बदलाव नहीं आया है।

निष्कर्ष

अब सवाल यह है कि ऐसी भयंकर अंधियारी रात में विवेकी कवि ज्ञान के प्रकाश से जीवन- पथ कैसे आलोकित करे। इस सन्दर्भ में ज्ञानेन्द्रपति का कहना है- "दुनिया को धुनिया चाहिए एक/ सब कुछ को जो धुन कर रख दे/ कबीर सा जोलाहा, धुन का पक्का/ उधेड़े फिर बुनकर रख दे।" तो वर्तमान समाज के लिए कबीर जैसे प्रखर कवि की आवश्यकता है, जो सच को सच कह सके। आजकल जीवन का सच छिपाया जा रहा है। विशेष रूप से मीडिया उसे जनता के सामने लाता ही नहीं है। अतएव समाज को जागरूक करने के लिए जनपक्षधर पत्रिकाओं की आवश्यकता है, जो हमारे लोकतंत्र की पोल खोल सकें। लेकिन पद, पुरस्कार और प्रतिष्ठा के लालच से कवि तल्ख बातें लिखने से बचते हैं। गिने-चुने कवि ऐसे हैं, जो सच को सच कहने का साहस करते हैं। नरेश सक्सेना ने बढ़ती हुई सांप्रदायिकता को दृष्टिगत रखते हुए ईश्वर के बारे में बड़ी तल्ख टिप्पणी की है। उनका कहना है- "निराकार नहीं है वो/ पर किसी बात पर जबाव नहीं उसके पास/ क्योंकि सब कुछ उसका किया धरा है/ दरअसल मुंह दिखने काबिल/ अब वो रहा ही कहां।" (2,3)

यह तल्ख वास्तविकता है कि आजकल भगवान और ईश्वर के नाम पर, अल्लाह और खुदा के नाम पर, राम और रहीम के नाम पर, गॉड के नाम पर बेगुनाहों का खून बेवजह बहाया जाता है। अपने-अपने ईश्वर और अल्लाह की रक्षा के लिए। भारत में बढ़ता हुआ सांप्रदायिक तनाव इस बात का प्रमाण है। और आतंकवाद का प्रकोप भी, जो अमरीकी साम्राज्यवाद की उपज है। ऐसी विषम परिस्थितियों में हिन्दी के जागरूक कवियों का कर्तव्य है कि वे जनवादी जीवनदृष्टि से वर्तमान समय की परिघटनाएं देखें-समझें और परखें। घटनाएं क्यों घटित हो रही हैं, उनका कारण बताएं। इसीलिए आज का कवि अपनी कलम को संबोधित करते हुए कहता है- "मैं तुम्हें/ अजर अमर नहीं बनाना चाहता/ न चाहता/ तख्त पे सजाना/ मै तो चाहता हूं कि तुम/ वर्ग चेतस द्वन्द्व सांसों में/ बसी होकर/ स्पंदित होती रहो।" (अलीक, कबीर राग)

अन्त में हम यह उचित समझते है कि समकालीन युवा कविता की कुछ कमियों की ओर संकेत किया जाए। आज का युवा कवि निराला के मुक्त छन्द का प्रयोग नहीं कर रहा है। इसलिए उसकी कविता में लयात्मकता का अभाव है। आवेग की कमी है। गद्यात्मकता की अधिकता है। व्यापक जीवन के विभिन्न अनुभवों का अभाव है। संघर्षशील और क्रियाशील जनों के चित्र उनकी कविताओं में कम लक्षित हो रहे हैं। अधिकतर कविताएं निजी अनुभवों तक सीमित हैं। उनमें वस्तुपरकता और आत्परकता के सामंजस्य का अभाव है। कोई भी समर्थ कवि अपनी परम्परा से जुड़े बिना श्रेष्ठ रचना की सृष्टि नहीं कर सकता है। यदि आदि कवि वाल्मीकि न होते तो क्या साहित्य मे राम-कथा की परम्परा होती। यह सत्य है कि आज का कवि आज के जीवन की बात कहेगा। लेकिन उसके कहने का ढंग निजी होना चाहिए। अपनी निजता की पहचान के लिए उसे जनपदीय जीवन से जुड़ना होगा। वहां के लोगों को अपनी कविता मे उपस्थापित करना होगा। लोगों की बोली-बानी के शब्दों का समावेश अपनी भाषा में करके उनके जीवन संघर्ष का निरूपण करना होगा। कविता में मौलिकता आसमान से नहीं टपकती है। उसका समावेश होता है लोक जीवन के पर्यवेक्षण से। यही कारण है कि हिन्दी कविता की मुख्य धारा लोकधर्मी है। अमीर खुसरो से आज के कवि विजेन्द्र तक। अतः युवा कवियों का यह कर्तव्य है कि यह मुख्य धारा निरंतर अग्रसर करते रहें।

ISSN(Online) : 2319-8753
ISSN (Print) : 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Vol. 5, Issue 5, May 2016

संदर्भ

1) Natural History, by Pliny the Elder -2000
2) प्रकृति, by Ralph Waldo Emerson-1995
3) प्रकृति, a prominent scientific journal-2002
4) नेशनल वाइल्डलाइफ़, publication of the National Wildlife Federation-2001
5) प्रकृति (TV series)-2000
6) Natural World (TV series)-1999